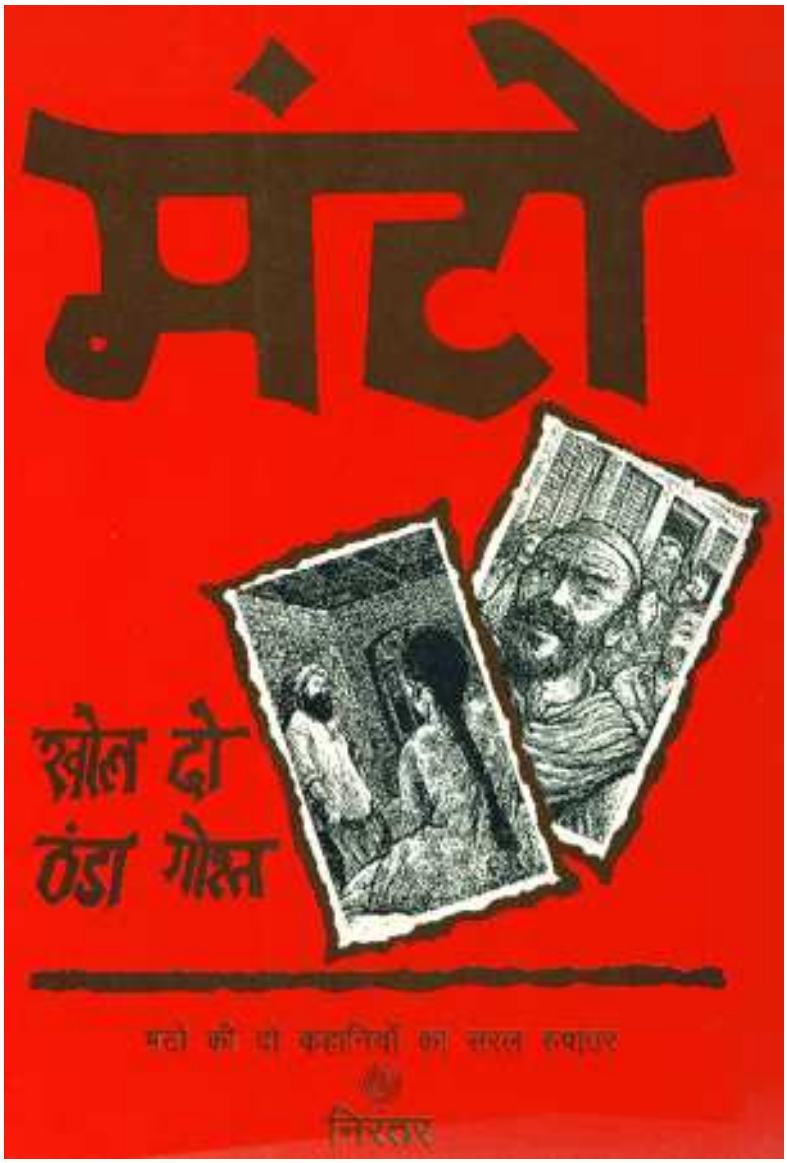

सआदत हसन मंटो

1947

भारत आज़ाद हुआ। एक तरफ़ मिला अंग्रेज़ों की ग़ुलामी से छुटकारा। और दूसरी तरफ़ देश के सीने पर छुरी चल गई। भारत दो हिस्सों में बंट गया। हिन्दुस्तान और पाकिस्तान बने। यह सिर्फ़ ज़मीन का बंटवारा नहीं था। यह था एक संस्कृति का बंटवारा; एक इतिहास का बंटवारा। परिवार बंट गए। भाषाएं बंट गईं। मानो लोगों की पहचान ही बंट गई।

कैसे हुआ यह बंटवारा? इसका कोई आसान जवाब नहीं। इसमें अंग्रेज़ी हुकूमत का बहुत बड़ा हाथ था। उनकी नीति थी – एकता में फूट डालकर देश को कमज़ोर करना। फूट डाली गई... धर्म के आधार पर। इतिहास के हर मोड़ पर अंग्रेज़ों ने हिन्दू-मुसलमान को एक दूसरे के ख़िलाफ भड़काया। और दोनों धर्मों की साम्प्रदायिक ताक़तों को बढ़ावा दिया। आज़ादी आंदोलन में भी अंग्रेज़ों ने ऐसा ही किया।

इस आंदोलन में कई राजनैतिक पार्टियां बनी थीं। इसकी अगवाई कर रही थी *भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस* नाम की पार्टी। और कंधे से कंधा मिलाए लड़ रही थी *अखिल भारतीय मुसलिम लीग।* अफ़सोस तो यह कि दोनों पार्टियों में कुछ साम्प्रदायिक ताक़तें थीं। इन ताक़तों को अंग्रेज़ी हुकूमत ने पूरी शह दी। और इन्हीं साम्प्रदायिक ताक़तों के साथ मिलकर देश का बंटवारा किया।

ठंडा गोश्त

खोल दो

निरंतर

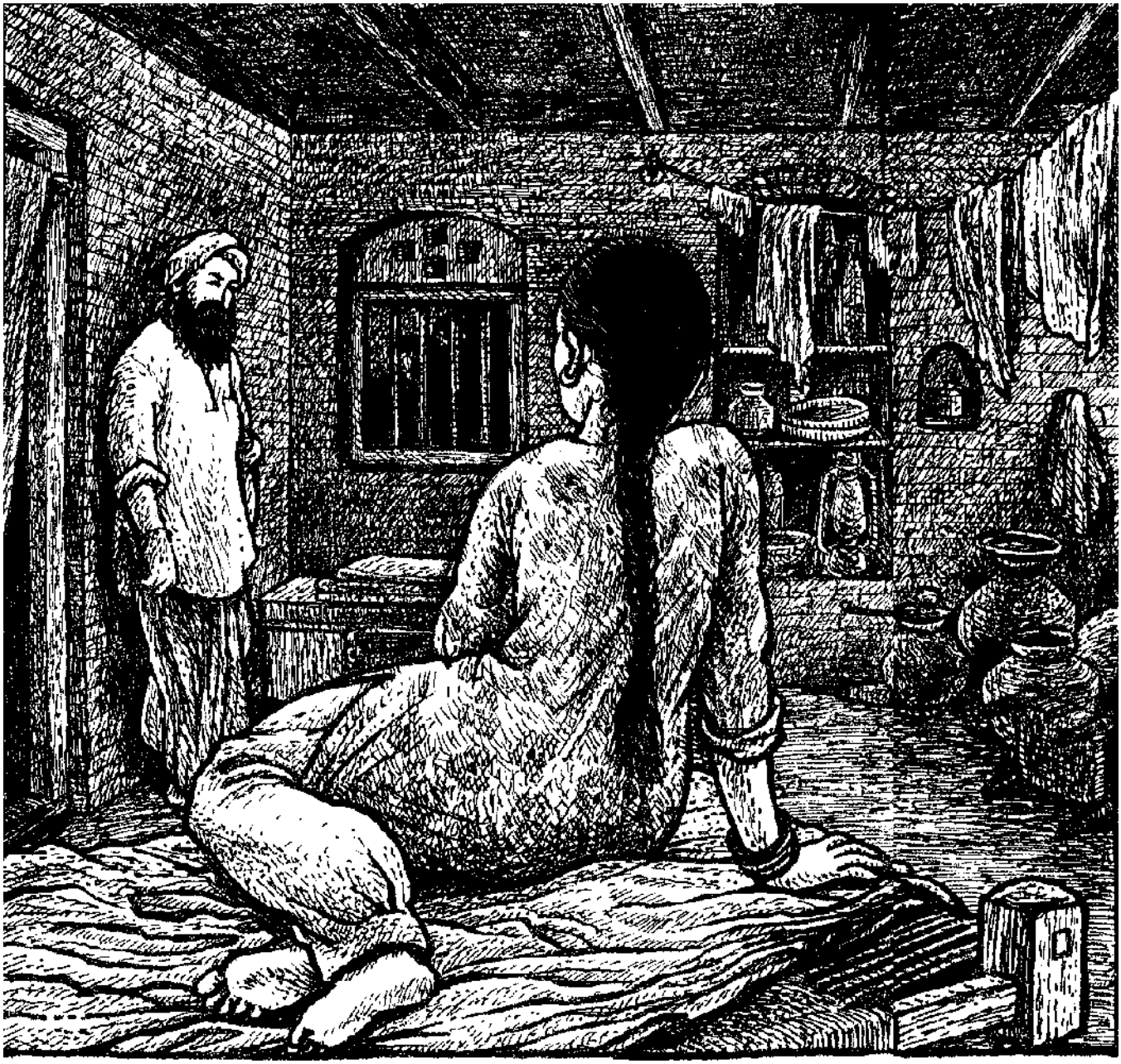

ठंडा गोश्त

आधी रात गए ईशरसिंह घर में घुसा। उसके कमरे में आते ही कुलवन्त कौर ने दरवाज़ा अन्दर से बन्द कर लिया। और आ कर पलंग पर धम्म से बैठ गई। ईशरसिंह चुपचाप कोने में खड़ा रहा। उसकी पगड़ी ढीली सी लटक रही थी। हाथ में किरपान थी। कुलवन्त कौर लम्बी-चौड़ी औरत थी। मोटी-मोटी जांघें, भरी छातियां, तेज़ चमकीली आंखें। उसकी ठुड्ढी से लगता था बड़ी कड़क औरत है।

ईशरसिंह सिर नीचा किए कोने में काफी देर चुपचाप खड़ा रहा। कुलवन्त जब यह चुप्पी और न सह सकी तो बोली — "ईशरसियां।" ईशरसिंह ने कुलवन्त की चुभती नज़र से घबरा कर मुंह फेर लिया। कोई जवाब नहीं दिया। कुछ और समय बीता। कुलवन्त ज़ोर से चिल्ला पड़ी — "ईशरसियां, कहां ग़ायब था इतने दिन? आठ दिन हो गए हैं। तूने कोई ख़बर तक न भेजी। और अब ये चुप्पी। क्या बात है?" ईशरसिंह ने होंठ गीले

करते हुए कहा – "मुझे मालूम नहीं।" यह सुन कुलवन्त भड़क कर बोली – "ये क्या जवाब हुआ ?"

ईशरसिंह ने किरपान फेंक दी। और धड़ाम से पलंग पर आ गिरा। ऐसा मालूम होता था वह कई दिनों का बीमार है। उसके बेजान से शरीर को देख कुलवन्त का दिल पिघल गया। बड़े प्यार से उसने पूछा – "क्या हो गया है जानू तुझे ?"

ईशरसिंह टकटकी लगाए छत की तरफ़ देख रहा था। मरी सी आवाज़ में बोला – "कुलवन्त।" आवाज़ में दर्द था। बस इतना कहकर उसने कुलवन्त की गोद में सिर रख दिया। कुलवन्त उसके बाल सहलाने लगी। और फिर प्यार से पूछा – "ईशरसिंह, क्या हो गया है तुझे ?"

ईशरसिंह ने कोई जवाब नहीं दिया। बस कुलवन्त को घूरकर देखा। उसे अपनी बाहों में समेट लिया। अपने बड़े-बड़े हाथों से उसका पूरा बदन मसलने लगा। और बोला – "कसम वाहे गुरू की, तू बड़ी जानदार औरत है।" कुलवन्त ने ईशरसिंह का हाथ एक तरफ़ झटक कर फिर

पूछा – "तुझे मेरी कसम, बता कहां रहा इतने दिन? क्या फिर शहर गया...?" ईशरसिंह मुंह फेरते हुए बोला – "नहीं।" कुलवन्त चिढ़ गई – "तू ज़रूर फिर से शहर गया था। बहुत रुपया लूटा और मुझसे छिपा रहा है।" ईशरसिंह झट बोल पड़ा – "मैं अपने बाप का बेटा नहीं अगर मैं तुझसे झूठ बोलूं।"

कुलवन्त कुछ देर सोचती रही। फिर बोली – "आठ दिन पहले तू मेरे साथ अच्छा भला लेटा था। शहर से लूटे सारे गहने तूने मुझे पहनाए थे।

और मुझे बार-बार चूम रहा था। फिर अचानक न जाने तुझे क्या हुआ। तू तेज़ी से उठा और कपड़े पहन कर बाहर निकल गया। अब आठ दिन बाद लौटा है तो वही हाल है तेरा। मेरी तो समझ में नहीं आता। तू बताता क्यों नहीं ?" यह सुन ईशरसिंह का चेहरा फीका पड़ गया। कुलवन्त ने जब ईशरसिंह का चेहरा पीला होते देखा तो बोली – "तेरे चेहरे का रंग तो देख ईशरसियां। ज़रूर दाल में कुछ काला है। तू वो आदमी नहीं रहा जो पहले था। तू बदल गया है।"

ईशरसिंह एकदम उठ बैठा जैसे किसी ने घाव पर नमक छिड़क दिया हो। कुलवन्त को अपनी मज़बूत बाज़ुओं में पूरी ताक़त से समेटा। और बार्-बार उसे चूमते हुए बोला – "मेरी जान, मैं तो वही हूं जो पहले था। मुझे तू और कस के पकड़ ले।" कुलवन्त

ने विरोध नहीं किया। पर अपनी रट भी नहीं छोड़ी – "ईशरसिंह, आठ दिन पहले उस रात तुझे क्या हो गया था?"

"कुछ नहीं।"

"नहीं बताएगा?"

"कोई बात हो तो बताऊं।"

जब कुलवन्त को कोई जवाब नहीं मिला तो बोली– "मुझसे झूठ बोला तो अपने हाथ से मेरी चिता को आग देगा।"

ईशरसिंह कुछ बोला नहीं। बस कुलवन्त के गले में बाहें डाल उसके होंठ चूमने लगा। मूछों के बाल कुलवन्त के नथनों में घुसे तो उसे छींक आ गई। दोनों हंसने लगे। फिर ईशरसिंह वासना भरी नज़रों से कुलवन्त को देखकर बोला – "आओ मेरी जान, एक बार हो जाए! कपड़े उतार कर आ जा मेरी कुलवन्त।" कुलवन्त ने बड़ी अदा से अपनी नज़रें घुमाईं और बोली – "हट, भाग जा।" ईशरसिंह मुस्कुराया। अपना कुर्ता उतार कर फेंक दिया और कहा – "हो जाए मेरी जान। अब आ भी जा।" कुलवन्त पिघल गई। ईशरसिंह ने कुलवन्त की बाहों

पर ज़ोर से चुटकी ली। मीठे दर्द से छटपटा कर कुलवन्त बोली – "बड़ा ज़ालिम है।" "होने दे आज ज़ालिम" – कहकर ईशरसिंह कुलवन्त के भरे बदन को मसलने लगा। मुंह भर-भर कर चूमने लगा। कुलवन्त के बदन के सारे तार झनझना रहे थे।

ईशरसिंह से जो हुआ, उसने किया। पर वह खुद अपने शरीर में गर्मी न पैदा कर सका। उधर कुलवन्त तेज़ आंच पर चढ़ी हांडी की तरह उबल रही थी। जब और न सहा गया तो वह मदहोश, धीमी आवाज़ में बोली – "ईशरसियां बहुत हो चुका। जान मेरे अब आ भी जा।" यह सुनते ही ईशरसिंह बिलकुल ढीला पड़ गया। माथे पर पसीने की बूंदें चमकने लगी। कुलवन्त ने उसे गर्माने की लाख कोशिश की। पर नाकाम रही। तब वह झटके से पलंग से उठी। गुस्से से बोली – "कौन है वह हरामज़ादी जिसने तेरे शरीर को निचोड़ कर रखा है? ऐसा निचोड़ा कि तेरी कुलवन्त भी आग नहीं जला सकती।" ईशरसिंह ने दर्द भरी आवाज़ में कहा – "कोई भी नहीं कुलवन्त। कोई भी नहीं।"

कुलवन्त ने दोनों हाथ कमर पर रख, गुस्से से कहा – "ईशरसियां आज मैं झूठ और सच जान कर

रहूंगी। खा वाहे गुरू की कसम - क्या इसके पीछे कोई औरत नहीं है?" ईशरसिंह ने 'हां' में सिर हिलाया। बस फिर क्या था। कुलवन्त पागल हो गई। लपक कर कोने से किरपान उठायी। ईशरसिंह पर हमला कर दिया। चोट गले पर लगी। ख़ून के फव्वारे छूटने लगे। ईशरसिंह धीमी आवाज़ में बोला – "कुलवन्त तूने जल्दी कर दी। लेकिन जो हुआ ठीक हुआ।" कुलवन्त पर तो एक ही धुन सवार थी। उसने फिर पूछा – "मगर वो औरत है कौन? मैं पूछती हूं, कौन है वो चुड़ैल?"

ईशरसिंह की जीभ पर ख़ून की बूंदें टपकने लगीं। उसे साफ़ बोलने में कठिनाई हो रही थी। वह

धीरे-धीरे बोलने लगा – "कुलवन्त, मैं बता नहीं सकता मेरे साथ क्या हुआ। दुनिया में औरत भी क्या चीज़ है। शहर में लूट मची थी। मैंने भी गहने, रुपये लूटे। सब कुछ ला कर तुझे दे दिया। पर एक बात तुझे नहीं बताई...।" ईशरसिंह का दर्द बढ़ने लगा। वह कराहने लगा। पर कुलवन्त को और कुछ नहीं सूझ रहा था। उसका दिमाग़ बस उस औरत पर टिका था। उसने पूछा – "कौन सी बात?"

ईशरसिंह ने धीरे-धीरे बताया – "तू तो जानती है कैसे भयानक दंगे हो रहे थे। चारों तरफ़ मार-काट मची थी। दंगा करने वाले घरों मे घुस-घुस कर लोगों को मार रहे थे। मैं भी लूट-मार में शामिल हुआ। एक घर में घुसा। लगा कि वहां लुटेरे आ चुके थे। घर के आधे लोग मरे, आधे घायल पड़े थे। सारा सामान तितर-बितर था। मैंने भी अपनी किरपान निकाली। जिसे ज़िन्दा पाया उसे वहीं मार डाला। जो सामान पाया उसे लूटा। फिर मेरी नज़र एक बेहोश लड़की पर पड़ी। वह बहुत सुन्दर थी। उसे देख मेरी नीयत बिगड़ गई। मैंने उसे मारा नहीं। उसे कंधे पर लादकर चल दिया। मैं उसके मज़े लेने को बेचैन हो रहा था। मन ही मन सोच रहा था–

कुलवन्त के मज़े रोज़ लेता हूं। आज इस सुन्दर लड़की को भी आज़मा लूं। रास्ते में नदी के पास झाड़ी के पीछे उसे लिटा दिया। झट अपने कपड़े उतार उस पर चढ़ बैठा।" यह कहते कहते ईशरसिंह की जुबान सूखने लगी। ख़ून से भरा थूक निगल कर गला तर किया।

कुलवन्त बेसब्र हो रही थी। बोल पड़ी – "फिर क्या हुआ?" ईशरसिंह ने मुश्किल से शब्द निकाले, "लेकिन... लेकिन...।" कुलवन्त बोली – "लेकिन.. क्या हुआ?" ईशरसिंह ने किसी तरह बन्द होती आंखे खोलीं। और दर्द भरी आवाज़ में कहा – "कुलवन्त वह... वह... सुन्दर लड़की मरी हुई थी। मैं एक लाश को उठा लाया था। एक लाश। बिलकुल ठंडा गोश्त। बर्फ़ से भी ठंडा।"

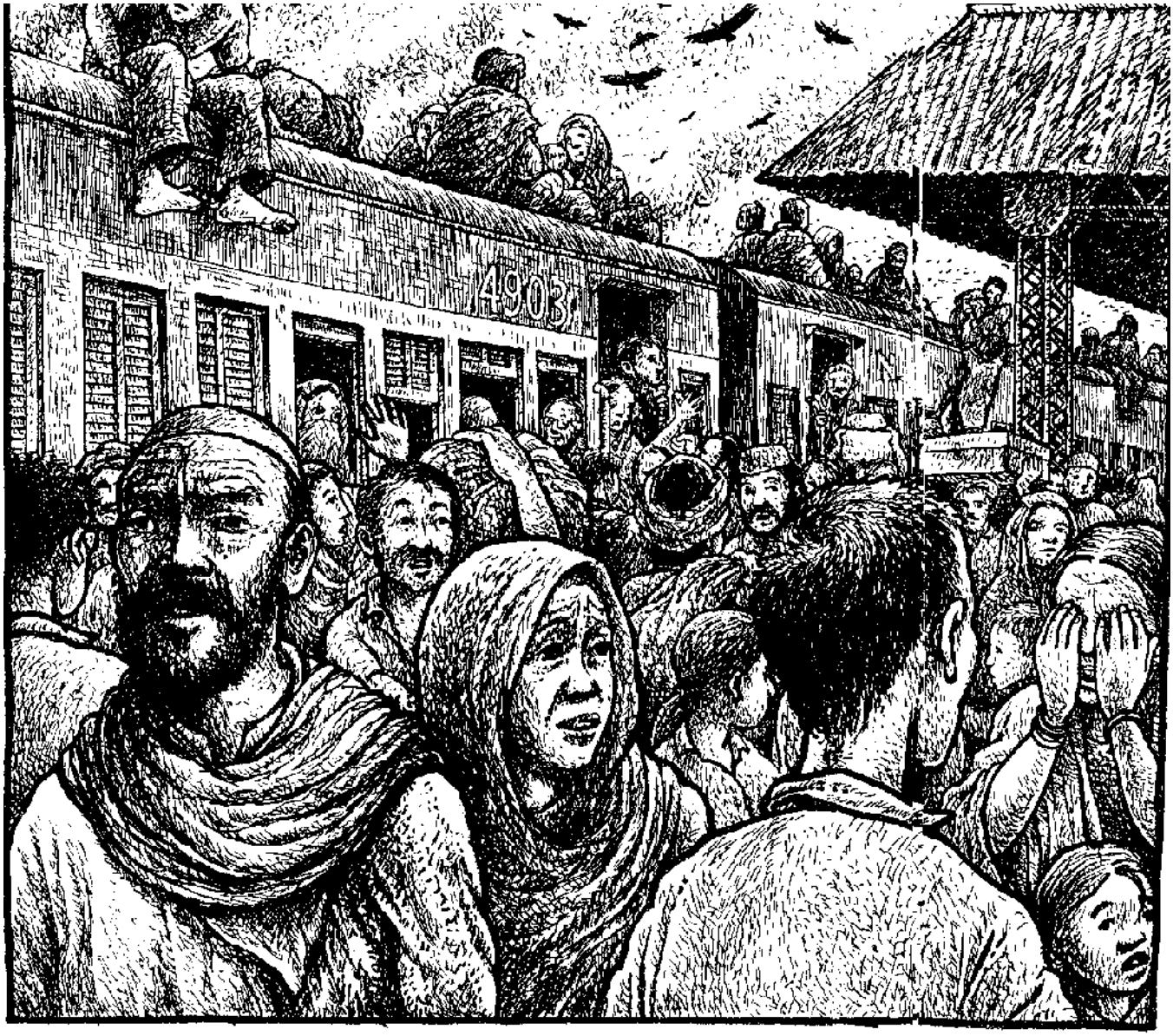

खोल दो

अमृतसर से रेल रवाना हुई। लाहौर पहुंचते-पहुंचते आठ घंटे लेट हो गई। रास्ते में कई लोग मारे गए। कई घायल हुए और बहुत सारे लापता थे। देश के बंटवारे का समय था।

सिराज को होश आया तो सुबह हो गई थी। उसकी आंखों के सामने सब कुछ घूम गया। लूट... हमला... आग... भागना... स्टेशन... गोलियां... सकीना। हां... सकीना कहां गई ? सिराज एक दम उठ खड़ा हुआ। घंटों अपनी जवान बेटी को ढूंढा। पर सकीना नहीं मिली।

चारों ओर लोग अपनों को खोज रहे थे। आख़िर सिराज थक-हार कर बैठ गया। सोचने लगा – सकीना और उसकी मां से कब और कहां बिछड़ा था? अचानक सकीना की मां का मरा शरीर आंखों के सामने आया। उसका चिरा हुआ पेट। ख़ून से लथ-पथ साड़ी। दम तोड़ते हुए उसकी आख़री आवाज़ सिराज आज भी सुन सकता था – "सकीना को लेकर

भाग जाओ ! मुझे रहने दो। हमारी बच्ची को बचा लो।" सकीना की कलाई कस के पकड़, सिराज भागा। नंगे पांव, पागलों की तरह दोनों भागते गए। फिर सकीना का दुपट्टा गिर पड़ा। दुपट्टा उठाने सिराज पल भर को रुका था। भागती भीड़ के पांवों से बचाकर दुपट्टा उठाया था.....अरे! दुपट्टा तो आज भी उसकी जेब में है। पर सकीना कहां गई?

सिराज ने अपने थके दिमाग़ पर बहुत ज़ोर दिया। सकीना कब बिछड़ी? वह रेलवे स्टेशन तक आई या नहीं? गाड़ी में बैठी या नहीं? दंगा करने वाले उसे उठा तो नहीं ले गए? सिराज को कुछ याद नहीं आ रहा था। कई दिन, बेटी का दुपट्टा जेब में लिए, सिराज इसी तरह भटकता रहा।

फिर एक दिन कुछ आशा बंधी। सिराज को आठ नौजवान लड़के मिले। उनके पास लाठियां थीं। बंदूकें थीं। एक ट्रक भी था। लड़कों ने बताया कि

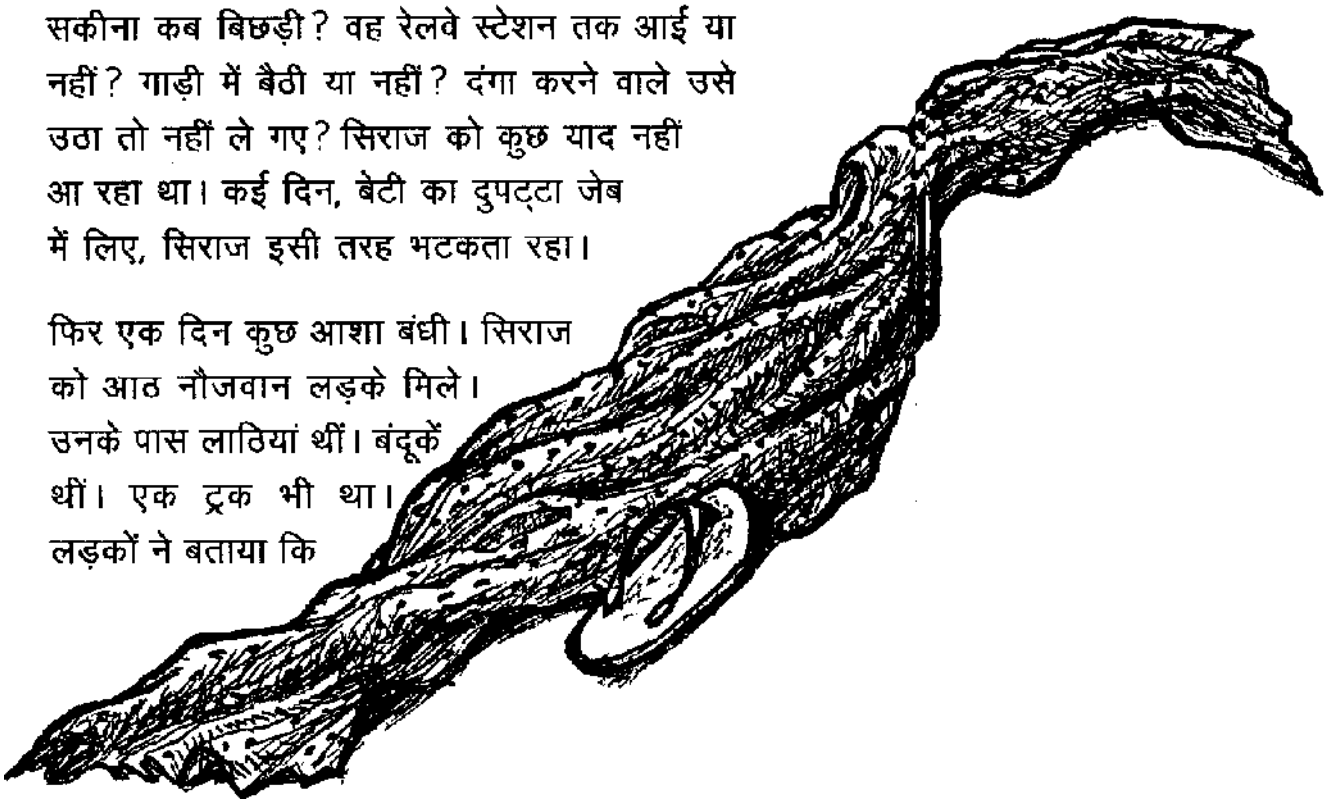

वे दूसरी तरफ़ छूटी औरतों और बच्चों को वापस ला रहे हैं। सिराज ने बेटी का हुलिया बताया। "गोरा रंग है। बड़ी-बड़ी आंखें। काले बाल। दाहिने गाल पर मोटा सा तिल। उम्र सत्रह साल। सकीना नाम है। मेरी बेटी को ढूंढ लाओ। ख़ुदा दुआएं देगा।" नौजवानों ने कहा – "अगर आपकी बेटी ज़िंदा है तो हम उसे खोज निकालेंगे।"

वे अमृतसर की ओर रवाना हुए। वहां से लौट रहे थे कि एक लड़की सड़क पर दिखी। इतने नौजवान लड़कों को देख, वह डर कर भागने लगी। लड़कों ने ट्रक रोका और उसके पीछे भागे। कुछ दूरी पर उसे रोक लिया। लड़कों ने दिलासा दिया। "घबराओ नहीं। क्या तुम सिराज की बेटी सकीना हो?" अनजान होठों पर अपना नाम सुन कर लड़की चौंकी। पर उसने माना – "हां, मैं सकीना हूं।" लड़कों ने उसे सिराज तक पहुंचाने का वादा किया। और सकीना उनके साथ ट्रक में चल दी।

कई दिन गुज़रे। सिराज को सकीना की कोई ख़बर

नहीं मिली। फिर एक दिन वही नौजवान लड़के दिखे। सिराज भागा-भागा उनके पास गया। पूछा – "बेटा, मेरी सकीना का पता चला?" लड़कों ने जवाब दिया – "अभी तक नहीं मिली।"

उसी दिन शाम की बात है। चार आदमी एक बेहोश लड़की को अस्पताल ले जा रहे थे। सिराज उनके पीछे-पीछे चल पड़ा। हिम्मत कर, वह अस्पताल के अंदर गया। वह लड़की पलंग पर पड़ी थी। किसी

ने बत्ती जलाई। कमरे में अचानक रोशनी हो गई। सिराज चीख़ा – "सकीना! यही है सकीना।" पास खड़े डाक्टर ने सिराज को घूर कर देखा। बड़ी मुश्किल से सिराज बोला – "जी मैं इसका बाप हूं।" डाक्टर ने सकीना की नब्ज़ देखी और खिड़की की ओर इशारा करके कहा – "खोल दो।"

'खोल दो' सुन कर सकीना ज़रा सी हिली। यह देख सिराज ख़ुशी से चीख़ पड़ा – "मेरी बेटी ज़िंदा है! ज़िंदा है।" सकीना की आंखें अब भी बंद थीं। पर उसके बेजान हाथ शलवार का नाड़ा टटोलने लगे। धीरे-धीरे नाड़ा खोला। शलवार नीचे सरकाई। और पैर चौड़े कर दिए। डाक्टर ने शर्म से आंखें नीचे कर लीं। उसके माथे पर पसीने की बूंद चमक आई।

मंटो

सआदत हसन मंटो पंजाब के लुधियाना ज़िले में पैदा हुए। ज़िन्दगी के कई साल बम्बई में गुज़ारे। वह चाहते थे कि जीवन भर बम्बई में ही रहें। पर हालात ने उनका साथ न दिया। 1947 में देश का बंटवारा हुआ। और मंटो को पाकिस्तान जाना पड़ा।

18 जनवरी 1955 की सुबह मंटो को ख़ून की उल्टी हुई। वह अस्पताल तक नहीं पहुंच पाए। रास्ते में ही दम तोड़ दिया। तब वह सिर्फ़ 42 साल के थे।

मंटो ने बहुत कुछ लिखा– कहानियां, नाटक, लेख। उनकी कहानियों में समाज की भयानक असलियत नज़र आती है। मंटो ने ख़ुद अपने बारे में लिखा था, "ज़माने के जिस दौर से हम गुज़र रहे हैं अगर आप उसे नहीं जानते तो मेरी कहानियां पढ़िये। अगर आप इन कहानियों को बर्दाश्त नहीं कर सकते तो इसका मतलब है ज़माना बर्दाश्त करने लायक नहीं।"

पर ये आम सामाजिक कहानियों जैसी नहीं जो विद्रोह की भावना भड़काती हैं, या दुख पहुंचाती हैं। मंटो की कहानियां न तो भड़काने वाली हैं, न ग़ुस्सा दिलाती हैं, और न ही नफ़रत पैदा करती हैं। बस, समाज की एक नंगी तस्वीर दिखाती हैं।

पर हर किसी को मंटो की कहानियां हज़म नहीं हुईं। और इन पर रोक लगाने के लिए मंटो पर कई मुक़दमे चले। उनपर आरोप था अश्लील, गंदी और भद्दी कहानियां लिखने का। यह मंटो की दो कहानियों का सरल रूपांतर है। उनमे से एक कहानी 'ठंडा गोश्त' को भी अश्लील करार किया गया। और उसे लेकर मंटो पर मुक़दमा चलाया

गया। आख़िर मंटो अपनी सफ़ाई देते–देते थक गए। मुक़दमा लड़ने के बजाए जुर्माना भरना बेहतर समझा।

देश के बंटवारे ने मंटो को तोड़ और झकझोर कर रख दिया। और इस पर उन्होंने कई कहानियां लिखीं। उन्होंने अपनी आंखो से पंजाब में हो रहे दंगे देखे। मार-काट देखी। आम आदमी को शैतान बनते देखा। 'खोल दो' और 'ठंडा गोश्त' आम इंसान में पैदा हुई इसी हैवानियत का नमूना हैं।